प्राकृतिक स्त्रोतों में जिनका मनुष्य शोषण करता है । जंगलों का प्रमुख स्थान है । मुख्य रूप से जंगलों से घिरे हुये ग्रामीणों को जंगली संसाधन सरल तरीके से उपलब्ध हो जाते हैं । जंगलों के बीच में ही वे पलते हैं । और पोषित होते हैं । जंगलों से दैनिक उपयोग चूल्हा के लिये लकड़ी, पशुओं के लिये चारा-चारापत्ती एवं खाने के लिये विविध प्रकार की सब्जी वन्य फल आदि उपलब्ध होते हैं । इस प्रकार जिन क्षेत्रों में जितने अच्छे जंगल होंगे उनकी दैनिक आवश्यकताओं की पूर्ति बढ़ती होगी । पर्वतीय क्षेत्रों के जंगल यहां के निवासियों के लिये दैनिक आवश्यकताओं के स्त्रोत ही नहीं हैं, बल्कि इन जंगलों के साथ इनका अस्तित्व जुड़ा है । उनके खेत, मकान, पानी, पशु आदि की निर्भरता इन जंगलों के ऊपर है । इसलिये उनके द्वारा किया गया शोषण सुविचारित है । लोग इसे [समझते हैं] पारिस्थितिकीय साम्य बनाने में महत्व पूर्ण भूमिका रखते हैं । क्षेत्र की जलवायु यहां के वनों पर आधारित होती है । कृषि भूमि की उर्वरता के साथ-साथ बड़ी-बड़ी सदा बहार जलधाराओं के उद्गम स्थल हैं, जो कि देश की प्राणरेखा है । ये नदियां पहाड़ों की घाटियों से होकर मैदानों की तरफ बहती हैं । वर्षा के समय पानी जंगलों की मोटी ऊपरी परतों, जिससे भूमि ढकी रहती है । से नीचे, जमीन और वृक्ष की जड़ों से सोख लिया जाता है, जो कि सुरक्षित जल भण्डार (रिजर्व वायर) का काम करता है तथा वर्ष पर्यन्त धीरे-धीरे रिसता रहता है । इस प्रकार वनों का मनुष्य के अस्तित्व को बनाये रखने में कितना महत्वपूर्ण स्थान है ।

आबादी कम थी गांव के पास ही जंगल थे । दूर के जंगलों पर ~~नरन~~ ~~नरन-न~~ दबाव नाम मात्र का भी नहीं था । इस शताब्दी के प्रारम्भ तक ~~य~~ पर्वतीय क्षेत्र एवं यहां के लोग अलग-थलग थे एवं उन तक पहुंचना कठिन था, इसलिये पर्वतीय जन के जंगलों के साथ परम्परागत रिश्ते जुड़े रहे और उसने अपने आस पास की प्राकृतिक सम्पदा का युक्ति युक्त दोहन के साथ संरक्षण किया, जो कि उनके पर्यावरण को सन्तुलित करता है ।

पिछले ~~दि~~ तीन दशकों से संचार साधनों का विकास एवं बढ़ती

क्रमश:-२।-

जनसंख्या का दबाव का प्रभाव पहाड़ों पर भी पड़ा । अगम्य क्षेत्र मनुष्य की पक पकड़ में आये । उनके प्राकृतिक स्त्रोतों का बिना सोचे समझे शोषण शुरू हुआ यद्यपि मनुष्य द्वारा स्त्रोतों का दुरुपयोग कोई नया नहीं है । आज भी उसके द्वारा किये गये विनाश के चिन्ह अंकित हैं,लेकिन इसका सर्वाधिक विनाश हिमालय में पिछले दो दशकों में शुरू हुआ । जब हिमालय के उस पार से हल चल शुरू हुयी,तो सीमा सुरक्षा की दृष्टि से अछूते वन क्षेत्रों तथा आन्तरिक हिमालय में जहां हिमानिया(ग्लेशियर) खिसका कर अते थे,हिमोढ़(मोरेन) पुराने भूस्खलन के मलबे में मोटर सड़कों का निर्माण किया गया । लोगों की उपजाऊ भूमि को काट कर सड़कों का जाल बिछा दिया गया । सातवें दशक के पूर्वार्द्ध में आन्तरिक हिमालय के द्वार पर विकास के नाम पर नये नगरों की स्थापना हुयी ।

जोशीमठ,ऊखीमठ,गोपेश्वर,ग्वालदम,कर्णप्रयाग,थराली,मुनस्यारी, पिथौरागढ़,धारचूला,डीडीहाट,भटवाड़ी,उत्तरकाशी,पुरोला,बड़कोट आदि पर्वतीय ग्रामों में जहां पहले कुछ सैकड़ों में लोग निवास करते थे । वहां पर विभिन्न ऐजेन्सियों के साथ जुड़े होने से जनसंख्या एक साथ हजारों तक पहुंच गई, कई अस्थिर क्षेत्रों में बिना विचारे भारी निर्माण कार्य किया गया । इसके लिये पहाड़ों को कम्पाने वाले कारतूसों का धमाका किया गया । नये नगरों की ईंधन आपूर्ति के लिये चौड़ी पत्ती के बांज-बुरांस,मोरु के जंगल काटे गये । ऊपर से वन विभाग के नाम पर कार्ययोजना की कुल्हाड़ी भी जंगलों को काटती रही । देखते ही देखते जिन घने जंगलों में बाघ,भालू,सुअर निर्भय होकर विचरण करते,नदियों को हिमानियों के बाद सदाबहार झरने बहते तथा स्थानीय ग्रामीणों की दैनिकी के जो आधार हैं,वे पर्वत वृक्ष विहीन हुये । इन सबके एकीकृत प्रभाव से हिमालय में भूस्खलन और बाढ़ नियमित घटना बन गई ।

गंगा की मुख्य धारा अलकनन्दा में सन् १९७० में आयी प्रलयंकारी

क्रमश:-३।-

बाढ़ इसकी पहली चेतावनी थी । जिसने कि अलकनन्दा के किनारे बसे हुये हजारों लोगों के मकान, खेत, मोटर मार्ग, पुलों को तो तहस-नहस किया । इनमें मिट्टी का जमाव हो गया । पत्थर, रेत, साद(Silt)तथा कीचड़ को प्रलयंकारी अलकनन्दा ने आगे चल कर मैदान की ओर बहाकर पश्चिम उत्तर प्रदेश की प्राण रेखा उत्तरी गंगा नहर को भी हरिद्वार में मायापुर बांध से पथरी विद्युत गृह के १० किलो मीटर तक साद(Silt) से भर दिया तथा लाखों लोगों को प्रभावित किया । सन् १९७० की अलकनन्दा की प्रलयंकारी बाढ़ से पूर्व इसके दांये एवं बायें किनारों पर स्थित उच्च पर्वत शिखरों तक जो कि अलकनन्दा की सहायक नदियों के जलागम हैं दो घण्टे तक अति-वृष्टि का होना बताया गया । जिसमें दांयी ओर के पर्वत शिखरों के नदी-नालों में जलस्तर बढ़ा, किन्तु बांयी ओर कुंवारी पर्वत जो अलकनन्दा के गरुड़गंगा से लेकर ऋषिगंगा तथा बिरही गंगा का जलागम है, में भूस्खलन तथा सम्वेदनशील ढलानों पर मलबा बहने तथा ऊपर जिन क्षेत्रों में इससे पूर्व के वर्षों में कार्य योजनानुसार पेड़ों का कटान हुआ था । वहां बाहरी कारण के साथ कटे हुये पेड़ों के मलबे ने अवरोध पैदा कर छोटे-छोटे बंध बनाये तबाही मचाई ।

यद्यपि ऊंचाई पर स्थित उबड़-खाबड़, ढलानों पर स्वाभाविक न्यूनता चट्टानों का धंसना एक सामान्य लक्षण है, तथापि प्राकृतिक कारणों के अतिरिक्त अस्थिर क्षेत्र में मोटर सड़कों का निर्माण, भारी कारतूसों का धमाका तथा वनों के कटान आदि मानवीय गतिविधियों के संयुक्त दुष्प्रभाव से अस्थिरता एवं भूस्खलन तथा बाढ़ को बढावा मिला है । इसे नकारा नहीं जा सकता है । इन तथ्य को भले वानिकी बनाने वालों ने नजर अन्दाज नहीं किया, किन्तु जब अलकनन्दा के इन अस्थिर जलागम क्षेत्रों में फिर से सन् १९७३-७४ में वनों के विनाश के कार्यक्रम आरम्भ हुये तो हमें इसके प्रतिकार के लिये अलकनन्दा की सहायक नदी ऋषिगंगा के जलागम रेणी में चिपको आन्दोलन चलाना पड़ा । इस आन्दोलन के तथ्यों के लिये उ०प्र० शासन ने

क्रमशः-४।-

डा० वीरेन्द्र कुमार की अध्यक्षता में विशेषज्ञों की समिति गठित की । इस समिति ने आन्दोलनकारियों के तथ्य को स्वीकारा तथा इसकी संस्तुतियों पर अप्रैल १९७७ में अलकनन्दा के सम्वेदनशील जलागम क्षेत्रों में दस वर्ष तक पेड़ों का कटान बन्द करने के आदेश प्रसारित किये तथा कार्ययोजना में वर्णित १३ हजार हैक्टर भूमि के वन कटान को निरस्त करना पड़ा । यही नहीं इस क्षेत्र के बिगड़ हुये पर्यावरण को सुधारने की दिशा में चिपको आन्दोलन की मातृ संस्था दशोली ग्राम स्वराज्य संघ को ही पहल करनी पड़ी। जोशीमठ, गरुड़गंगा आदि में पिछले पांच वर्षों से शिक्षण एवं ~~श्रम~~ शिविरों का ~~व~~ आयोजन किया । जिसके अन्तर्गत भूस्खलन रोको एवं नंगे पहाड़ों में अपने सीमित साधनों से वनीकरण किया जाता है ।

अकेले मध्य हिमालय में स्थित उत्तराखण्ड के सीमान्त ~~व~~ जनपद चमोली में अलकनन्दा एवं रामगंगा के १७१ नदी-नालों से जनपद के एक तिहाई के ~~कारन~~ बराबर ४५४ गांव के खेत,मकान,मार्ग,पेयजल योजनायें तथा जंगल भूस्खलन से प्रभावित हैं या खतरे में हैं । इस प्रकार की स्थिति अन्य हिमालयी ~~जनपदों~~ जनपदों की भी है । सम्पूर्ण हिमालय जीर्ण और जर्जर है । उसे विश्राम के साथ-साथ अति प्राथमिकता के आधार पर संवारने की आवश्यकता है । यह शुभ लक्षण है कि हिमालय के बिगड़ते पर्यावरण के प्रति हमारे देश के शीर्षस्थ नेता एवं वैज्ञानिक भी चिन्तित हैं । मुख्य रूप से कृषि वैज्ञानिक डा० एम०एस० स्वामीनाथन इस क्षेत्र के परिस्थितिकीय के बारे में अपने चिन्तन को व्यवहारिक रूप देने में कई संगठनों एवं व्यक्तियों को प्रेरित कर रहे हैं ।

हम समझते थे कि यह आपदा हिमालय पर आयी है । पश्चिम घाट के पर्वत एवं ~~स्थित~~ वहां स्थित जंगलों को काटकर निर्मित एवं निर्माणाधीन जल विद्युत परियोजनाओं के प्रभावों का आर्थिक सामाजिक,सांस्कृतिक एवं परिस्थितिकीय अध्ययन कर विद्वत जनों ने जो तथ्य प्रकट किये हैं । वह पश्चिम घाट की भूमि,लोग एवं पशुओं की समस्याओं को प्रकट करते हैं एवं उन पर आने वाली आपदाओं की ओर इंगित करते हैं । इस संगोष्ठी का आयोजन कर टोटोर सुसायटी ने देश के अनेकों लोगों का ध्यान प्राकृतिक स्त्रोतों के विकास की समस्याओं,लोगों के हितों,पर्वतीय एवं वन क्षेत्रों में पर्यावरण की ओर आकृष्ट किया है । जिसमें कि वैज्ञानिक एवं तकनीकी ज्ञान से युक्त विशिष्ट विषयों का स्पष्टता से परिभाषित किया गया है । इस क्षेत्र की जो विद्युत परियोजनायें हैं,जिनके बारे में द्वन्दात्मक स्थितियां प्रकट हुई है । इस संगोष्ठी से उनका समाधान होगा, पश्चिमी घाट में इन योजनाओं की नीति निर्धारक सन्तुलित नितियों के प्रतिपादन को कार्यान्वित करेंगें । यहां के जो प्रयास हैं पूरे देश एवं मुख्य रूप से पर्वतीय क्षेत्रों के संदर्भ में अत्यन्त आवश्यक एवं मार्ग दर्शक है । पर्वतीय भूमि एवं वनों एवं स्त्रोतों के विकास से सम्बन्धित योजनाओं को अलग-अलग न देख कर नीति निर्धारकों को विनाश वाले विकास के खतरों के प्रति जो आगाह किया जा रहा है । इसमें स्थानीय अभिक्रम पर वैज्ञानिक,शोधकर्ता,योजनाकार,सामाजिक कार्यकर्ता,लोगों द्वारा क्षेत्र के पर्यावरण स्त्रोतों का संरक्षण एवं लोगों के हित के लिये मिल बैठ कर समुचित सन्तुलन को बनाये रखने के लिये खोज कर रहे हैं । इस परम्परा का विस्तार दूसरे क्षेत्रों में भी करेंगे । यह मेरा अनुरोध है ।

दशोली ग्राम स्वराज्य संघ,
गोपेश्वर जिला चमोली
उत्तर प्रदेश

चण्डी प्रसाद भट्ट